THE ECONOMIC TIMES

Date:03-08-21

How to Avoid Lailapurs

Subimal Bhattacharjee, [The writer is a defence and cybersecurity analyst]

As the after-effects of the violent clashes on the Assam-Mizoram border on July 26 at Lailapur-Vairengte sector continued — and these included carrying the conflict to cyberspace — Assam and Nagaland signed a memorandum of understanding (MoU) on July 31, agreeing to remove their respective forces from the Dessoi Valley reserve forest to their base camps. The move is significant.

If a resolution for the 512 km-long Assam-Nagaland border can be achieved at least in spirit, then a resolution for the 165 km Assam-Mizoram border — or, for that matter, for the 884 kmlong Assam-Meghalaya and 801 kmlong Assam-Arunachal Pradesh ones — could also be sincerely sought for.

These border conflicts have arisen due to past contestations, when technology to measure the vast stretches accurately wasn't possible. As a result, the matter was allowed to drag on and even manipulated. With the passage of time, encroachments on reserve forest lands and expansion of habitations have led to increasing pressure points in various locations, a few of which have become flashpoints.

Importantly, in this resolution for the Assam-Nagaland border, the usage of unmanned aerial vehicles (UAVs) and satellite imagery has been mentioned in the MoU for the purposes of monitoring so that status quo is maintained. However, both these technologies can go further in working towards a longlasting solution to the vexed border issues among the northeastern states.

Home Minister Amit Shah had indicated this in January at the North Eastern Council (NEC) meeting, where he suggested the usage of satellite imagery technology from the North Eastern Space Applications Centre (Nesac), a joint venture between GoI's Department of Space and NEC. Nesac has started providing geographical information system (GIS) and remote sensing for various activities in the eight northeastern states in the management of natural resources and disasters. It has recently released the North Eastern Spatial Data Repository (NeSDR), with 950 datasets that will help the states to deal with encroachments. Clearly, this can go a long way to help the states resolve their border disputes.

The usage of technology for interstate borders will have to be on two premises: one, to scientifically demarcate the borders; and two, to manage the agreed-upon borders and prevent encroachments, maintain buffer zones where created, and prevent building habitats and destructive cultivation on reserved forests. Besides satellite imagery, which is characterised by its latency and mediumresolution images, communications management helps in real-time and high-resolution images of targets.

Today, fixed and mobile video surveillance systems, range finders, thermal imaging devices, ground sensors and radio frequency sensors are easily available to address such requirements. Border demarcation on satellite imagery based on the latitudinal and longitudinal positions on the existing

cartographic maps has to be adhered to, as agreed by the states during the time of their formation. Once this is achieved, the next steps of maintaining the sanctity of that will be based on the communications technology over terrains that are not necessarily the easiest to move around. Video surveillance with resolutions lesser than 0.3 m via UAVs can pick up accurate feeds.

The fact remains that while technology remains available, it has to be used in a shared manner so that surveillance on each other doesn't end up becoming another issue to resolve. In the latest skirmish at Lailapur-Vairengte, drones from both Assam and Mizoram police forces were seen flying in each other's territories. In a few states, various student bodies and civil organisations have set up nonpolice checkposts to check travelling passengers that often lead to harassment. This is wilfully ignored by the state governments for political reasons, and has reached its peak during Covid-19-related lockdowns and restrictions. Clearly, these states — the northeast being vulnerable to a spike in Covid cases — have to be responsible and prevent such situations.

India's northeastern region has seen wider engagement and attention in the time of the current central government than before. An effort now has been made to use technology for a better reach-out and governance. As age-old perceptions about the region change with better law and order, the last thing anyone wants to see is inter-state conflicts where police and residents on either side of the border hurl missiles or use kinetics against each other.

In resolution as well as future monitoring, disputes that arise should be resolved jointly and collectively with the technology feeds and footprints, without allowing matters to escalate to conflict levels.

दैनिक भास्कर

Date:03-08-21

जातिगत जनगणना के गहन और बुनियादी प्रभाव होंगे

अभय कुमार दुबे, (सीएसडीएस, दिल्ली में प्रोफेसर और भारतीय भाषा कार्यक्रम के निदेशक)

नई राष्ट्रीय जनगणना शुरू होने वाली है। हर बार की तरह एक बार फिर जातियों की गिनती का पेचीदा सवाल उसके ऊपर मंडराने लगा है। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ जातियों को गिनने के खिलाफ है। लेकिन भाजपा सरकार 2018 में कह चुकी है, 2021 में होने वाली जनगणना में अन्य पिछड़े वर्ग की श्रेणी में आने वाली जातियां गिनी जाएंगी। अनुसूचित जातियों व जनजातियों की जातिवार गिनती पहले ही होती है। अर्थात, अगर जातिगत जनगणना हुई और सरकार ने फैसला ऐन मौके पर न

बदला तो भारतीय समाज के 70-80% हिस्से की जातिवार संख्यात्मक तस्वीर सामने आ जाएगी। इसके परिणाम कुछ ऐसे निकल सकते हैं जो इस समय न तो इसके समर्थकों की समझ में आ रहे हैं और न ही इसके विरोधियों के।

मुख्यतौर पर ओबीसी जातियों के नुमाइंदे जातिगत जनगणना के लिए दबाव डाल रहे हैं। उन्हें लगता है कि इसके ज़रिये वे अपने आरक्षण को 27% से बढ़ाकर अपनी संख्या के बराबर लाने का दावा ज्यादा मज़बूती से कर सकेंगे। आखिर दलितों और आदिवासियों के लिए आरक्षण का प्रतिशत उनकी आबादी के हिसाब से ही तय किया गया है। लेकिन, आज की तारीख में वे यह नहीं समझ पा रहे हैं कि जैसे ही ओबीसी जातियों (मुसलमानों समेत) की अलग-अलग संख्या की प्रामाणिक जानकारी मिली, वैसे ही इस दायरे की प्रभुत्वशाली जातियों (यादव, लोधी, शाक्य और कुर्मी) को उनकी संख्या से अधिक मिल रहे आरक्षण के लाभों पर सवालिया निशान लग जाएगा। अंदेशा यह है कि जो गोलबंदी वे ऊंची जातियों के खिलाफ करना चाहते हैं, वह ओबीसी दायरे में अति पिछड़ों द्वारा उन्हीं के खिलाफ होने लगेगी। ओबीसी जातियों में एकता के बजाय फूट पड़ जाएगी। नतीजतन, सामाजिक न्याय की राजनीति खात्मे की तरफ बढ़ने लगेगी।

अभी तक जो पार्टियां और नेतागण स्वयं को पिछड़ों के हक में लड़ने वाला बताते रहे हैं, उनसे हो सकता है कि कुछ नए सवाल पूछे जाने लगें। मसलन, उनसे जवाब तलब किया जा सकता है कि सात से पंद्रह साल के बीच कई-कई बार सत्ता में रहने के बावजूद उन्होंने आरक्षण का न्यायपूर्ण बंटवारा सुनिश्चित क्यों नहीं किया? एक सवाल यह भी पूछा जा सकता है कि जब वे सत्ता में थे तो क्या वे आरक्षण का कोटा पूरी तरह से लागू करने की गारंटी कर पाईं या उसके लिए कोई विशेष प्रयास किया?

जातिगत जनगणना के विरोधियों को लगता है कि इससे जाति-संघर्ष तीखा होगा। हिंदू और मुसलमान समाज के भीतर गृहयुद्ध छिड़ सकता है। लेकिन, मुमकिन है कि यह अंदेशा केवल एक कपोल-कल्पना ही साबित हो। दरअसल, जातिगत जनगणना राजनीतिक गोलबंदी के ढांचे को रैडिकली बदल सकती है। राजनीतिक मांगों का विन्यास और पार्टियों के घोषणापत्र हो सकता है कि जनगणना के बाद पहले जैसे न रह जाएं। चुनाव में टिकटों के बंटवारे के मानक नए सिरे से तैयार करने पड़ सकते हैं। पार्टियों में पदों का बंटवारा, सरकारों में मंत्रिपदों का वितरण, यानी हर चीज़ पहले जैसी नहीं रह जाएगी। कुल मिला कर कहा जा सकता है कि जातिगत जनगणना के प्रभाव गहन और बुनियादी होंगे, उन अर्थों में नहीं जिनमें लोग सोच रहे हैं, बल्कि उन अर्थों में जिनमें अभी सोचना तकरीबन नामुमकिन है।

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date:03-08-21

संसदीय गरिमा का हो सम्मान

संपादकीय

सूचना-प्रौद्योगिकी पर संसद की स्थायी समिति के अध्यक्ष शशि थरूर ने लोकसभा अध्यक्ष को पत्र लिख कर इस समिति के समक्ष पेश नहीं होने वाले केंद्र सरकार के अधिकारियों के विरुद्धकार्रवाई करने की मांग की है। यह समिति पिछले सप्ताह बुधवार को कई महत्त्वपूर्ण विषयों पर चर्चा करने वाली थी। इनमें पेगासस विवाद सबसे महत्त्वपूर्ण था जिसे लेकर सरकार और विपक्ष के बीच संसद में भारी गतिरोध बना हुआ है। थरूर ने पत्र में आरोप लगाया कि इस विषय से संबंधित तीन मंत्रालयों-इलेक्ट्रॉनिक एवं सूचना-प्रौद्योगिकी, संचार और गृह-के अधिकारियों को समिति के समक्ष उपस्थित होने का निर्देश दिया गया था लेकिन इन तीनों अधिकारियों ने आखिरी क्षण में उपस्थित होने में असमर्थता जताई। तीनों अधिकारियों ने एक-एक कर कुछ समय के अंतराल पर उपस्थित होने में असमर्थता जताई। इससे यह माना जा सकता है कि तीनों अधिकारियों ने एक सोची समझी रणनीति के तहत यह व्यवहार किया। थरूर के पत्र के बाद सत्ताधारी भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) से संसदीय समिति के एक सदस्य निशिकांत दुबे ने कहा कि 'थरूर की मनोदशा एवं उनके कार्य करने का तरीका' सभी जानते हैं इसलिए लोकसभा अध्यक्ष को उनके आग्रह पर ध्यान नहीं देना चाहिए। दुबे ने यहां तक कह दिया कि थरूर की खास विचारधारा है और उसी से प्रेरित होकर उन्होंने पत्र लिखा है इसलिए लोकसभा अध्यक्ष को हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए।

समिति के समक्ष अधिकारियों का अनुपस्थित होना अपनी जवाबदेही से मुकरने का गंभीर मामला बनता है। दुबे काकहना है कि विधायिका और कार्यपालिका के बीच एक गोपनीय समझौता है जिसका आशय है कि दोनों अंगों के प्रतिनिधि एक दूसरे की अवमानना नहीं करेंगे। मगर कार्यपालिका के लोगों की संसद के प्रति जवाबदेही बनती है। सरकार के तीनों अंगों, खासकर, कार्यपालिका और विधायिका के बीच संतुलन देश हित के लिए बेहद जरूरी है। अगर कार्यपालिका के प्रतिनिधि संसद के निर्देशों का पालन करने से पीछे हटते रहे और एक रणनीति के तहत ऐसा करते रहे तो यह न केवल संसद के अधिकारों का हनन होगा बल्कि सांविधानिक बुनियाद पर प्रहार होगा। कम से कम उक्त मामले में ऐसा ही प्रतीत हो रहा है कि संसद की गरिमा बनाए रखने में जान बूझकर कोताही बरती गई है। संसदीय समिति संसदीय कार्य प्रणाली का एक अहम अंग है और यह कार्यपालिका के लोगों की जवाबदेही तय करती है। संसदीय समिति की कार्यवाही पर्दे के पीछे चलती है और इसे राजनीति से जोड़कर नहीं देखा जाना चाहिए। बिना अधिक संकोच के यह कहा जा सकता है कि संबंधित अधिकारियों ने समिति के समक्ष उपस्थित नहीं होकर संविधान की गरिमा बनाए रखने की शपथ के साथ खिलवाड़ की है।

पेगासस विवाद एक ऐसा मसला है जिस पर संसदीय समिति को चर्चा करनी चाहिए। दुनिया के दूसरे लोकतांत्रिक देशों में कार्यपालिका द्वारा निगरानी एवं अन्य खुफिया जांच से जुड़े कदमों की सभी दलों के प्रतिनिधियों द्वारा सार्वजनिक रूप से समीक्षा होती है। यह एक स्थापित प्रणाली है और अच्छी तरह कार्य कर रही है। भारत में ऐसी कोई औपचारिक संरचना नहीं है लेकिन इसका प्रावधान जरूर है कि यदि कोई समिति कार्यपालिका के प्रतिनिधियों से जानकारियां मांगती हैं तो संबंधित अधिकारी को नि:संकोच सहयोग करना चाहिए। सरकार के दोनों अंगों के बीच आपसी समन्वय बनाए रखने के लिए यह सर्वाधिक प्रभावी उपायों में एक है। लोकसभा अध्यक्ष इन अधिकारियों को संसद के निर्देशों का उल्लंघन करने की अनुमति नहीं दे सकता अन्यथा सरकार को उत्तरदायी ठहराने की सांविधानिक व्यवस्था के ढांचे को असाधारण नुकसान पहुंचेगा।

Date:03-08-21

अफगानिस्तान में भारत का 'आखिरी दांव'

श्याम सरन, (लेखक पूर्व विदेश सचिव और सीपीआर के सीनियर फेलो हैं)

क्या हम अफगानिस्तान पर तालिबान का पूरी तरह कब्जा हो जाने के मुहाने पर पहुंच चुके हैं? अमेरिकी एवं नाटो की सेनाओं की वापसी के बीच तालिबानी लड़ाके जिस रफ्तार से अफगानिस्तान के अलग-अलग इलाकों पर कब्जा करते जा रहे हैं उससे ऐसा होना अवश्यंभावी ही लग रहा है। अफगान सरकार के सुरक्षाबल राजधानी काबुल एवं अन्य महत्त्वपूर्ण ठिकानों पर तालिबान के कब्जे को कुछ समय तक टाले रखने में सक्षम हो सकते हैं लेकिन तालिबान के कब्जे वाले इलाकों के बढ़ते दायरे को देखते हुए इन जगहों को अपने पास रख पाना मुश्किल नजर आ रहा है।

साफ है कि तालिबान अफगानिस्तान की सत्ता में किसी तरह के बंटवारे के पक्ष में नहीं है। उसकी मंशा अफगानिस्तान के समूचे इलाके पर अपना कब्जा जमाने की है। एक तरफ अशरफ गनी सरकार को मिलता आ रहा सेना का पुरजोर समर्थन कम हुआ है, वहीं तालिबान को पाकिस्तान से पूरी मदद मिल रही है और पाकिस्तानी सेना से जुड़े लोगों से उसे सलाह एवं सहयोग मिलने की भी खबरें हैं। यह भी कहा जा रहा है कि पाकिस्तान स्थित आतंकी समूह लश्कर-ए-तैयबा (एलईटी) और जैश-ए-मोहम्मद (जेईएम) के लड़ाके भी अफगानिस्तान में जारी जंग में सक्रियता से हिस्सा ले रहे हैं। भले ही पाकिस्तान अफगान सरकार एवं तालिबान के बीच शांति बहाली की कोशिशों में लगे होने का दावा करता है लेकिन वह अफगानिस्तान में तालिबान का शासन स्थापित करने में पूरी शिद्दत से लगा हुआ है।

असल में पाकिस्तान ने ही तालिबान को पाला-पोसा है और पिछले दो दशकों में उसे पनाहगाह मुहैया कराता रहा है। पाकिस्तान ने अमेरिका की बढ़ती नाराजगी और अपनी सीमा पर स्थित तालिबानी ठिकानों पर ड्रोन हमलों से जुड़े जोखिमों के बावजूद ऐसा किया है। एक ताकतवर महाशक्ति को बाहर का रास्ता दिखाने से एक तरह का हर्षोल्लास भी है। पाकिस्तान के लिए अब तालिबान पर किए गए निवेश का लाभांश वसूलने का वक्त है। उसके लिए सबसे बड़ा लाभांश अफगानिस्तान से भारत की मौजूदगी को न्यूनतम करना है। भारत के खिलाफ सीमापार आतंकवादी गतिविधियों का एक ठिकाना बनाने और पाकिस्तान के भीतर पख्तून अलगाववाद पर काबू पाने में भी उसे मदद मिल सकती है।

यह स्पष्ट है कि चीन, ईरान एवं रूस जैसी प्रमुख क्षेत्रीय ताकतें तालिबान नेतृत्व के साथ संपर्क में हैं जिससे उसे राजनीतिक वैधता मिल जाती है। इन देशों का आकलन है कि तालिबान ही अफगानिस्तान के भावी शासक हैं, लिहाजा अपने हितों को सुरक्षित रखने के लिए उस पर ही निर्भर रहना होगा। अमेरिका भी आगे चलकर तालिबान शासन के साथ मेलमिलाप कर रिश्ते बहाल कर सकता है। यूरोपीय देश नए शासकों के सामने मानवाधिकारों का सम्मान करने और महिलाओं पर फिर से पाबंदियां न लगाने की मांगें पुरजोर तरीके से रखने के बाद अमेरिका का अनुसरण कर सकते हैं।

नब्बे के दशक के उलट तालिबान को इस बार कहीं बड़ी राजनीतिक वैधता मिल रही है। चीन की दरियादिली तब तक बरकरार रहेगी जब तक कि तालिबानी निजाम चिनच्यांग इलाके में चीन के शासन को चुनौती दे रहे पूर्व तुर्केस्तान स्वतंत्रता आंदोलन को किसी तरह की पनाह नहीं देगा। तालिबान ने हाल ही में एक सार्वजनिक बयान जारी किया है कि वह पूर्व तुर्केस्तान आंदोलन को अफगान सरजमीं का इस्तेमाल चीन के खिलाफ करने की मंजूरी नहीं देगा। ईरान एवं रूस भी तालिबान से कुछ इसी तरह का आश्वासन पाने की कोशिश में लगे हुए हैं और इस लिहाज से सबको यही लगता है कि पाकिस्तान की भूमिका सबसे अहम होगी। ऐसे में भारत के लिए रणनीतिक तौर पर समझदारी होगी कि वह भी

तालिबान से संपर्क साधे और उससे बात करे लेकिन ऐसा कदम इस भ्रम के बगैर उठाया जाना चाहिए कि तालिबान एक 'राष्ट्रवादी' समूह है और उसे एक सीमा तक पाकिस्तानी सरपरस्तों से अलग किया जा सकता है।

अगर तालिबान का राष्ट्रवादी आडंबर है भी तो इस पहलू पर गौर करना होगा कि पाकिस्तान के साथ बातचीत में क्या लेनदेन हो सकता है? अफगानिस्तान में भारत की कूटनीतिक मौजूदगी खत्म करने या वहां की किसी भी ढांचागत परियोजना में भारत को कोई भी भूमिका न देने की पाकिस्तान की मांग को पूरा करना तालिबान के लिए ज्यादा मुश्किल नहीं होगा। दरअसल तालिबान को भी अंतरराष्ट्रीय वैधता हासिल करने में पाकिस्तान से भरपूर मदद मिल रही है और ताकतवर चीन के साथ सौदेबाजी में भी यह पड़ोसी एक असरदार बिचौलिये की भूमिका निभा सकता है। चीन का दीर्घकालिक अनुमान जो भी हो, निकट भविष्य में तो वह तालिबानी दबदबे वाले अफगानिस्तान के दुर्गम इलाकों से पार पाने के लिए पाकिस्तान पर ही निर्भर रहेगा। भारत के नजरिये से देखें तो इनमें से कोई भी पहलू अच्छा नहीं दिखता है। अफगानिस्तान में भारत की भूमिका सीमित पहुंच होने से बहुत कम हुई है। एक तरफ पाकिस्तान उसका रास्ता रोके हुए है तो दूसरी तरफ ईरान का रास्ता भी ज्यादा समस्याएं पैदा करने लगा है। रूस के चीन की राह पर ही चलने के आसार हैं जिसका मतलब पाकिस्तान के ही हिसाब से चलना होगा। यह 2001 से पहले के दौर से बहुत अलग होगा जब भारत तालिबान के खिलाफ ईरान, रूस एवं कुछ मध्य एशियाई देशों के साथ मिलकर एक गठजोड़ तैयार करने में सफल रहा था। अगर ऐसा कोई गठजोड़ इस बार भी बनता है तो भारत उसे सैन्य साजो-सामान के तौर पर कब तक समर्थन देगा?

असल में भारत और अमेरिका दोनों देशों के विश्लेषकों में एक हद तक सदिच्छा भरी सोच हावी दिखती है। यह दलील दी जा रही है कि पाकिस्तान एवं चीन दोनों ही समय के साथ अफगानिस्तान में अस्थिरता, हिंसा एवं आपसी संघर्ष के भंवर में फंसकर रह जाएंगे क्योंकि इस देश का इतिहास ही कुछ इसी तरह का रहा है। इसका मतलब है कि भारत को वक्तलेना चाहिए और अफगानिस्तान का इतिहास दोहराए जाने तक इंतजार करना चाहिए। संभवत: ऐसे हालात देखने को भी मिलेंगे लेकिन इस अवधि में भारत के हितों को गंभीर क्षति पहुंचने की आशंका बहुत ज्यादा है। इसका फौरी असर जम्मू कश्मीर पर पड़ सकता है जो संवेदनशील रूप से एक तरफ पाकिस्तान एवं दूसरी तरफ चीन से सटा हुआ है। सच है कि हमारे सामने बहुत थोड़े विकल्प ही हैं, लिहाजा वक्त का इंतजार करना हमारी मजबूरी है, विकल्प नहीं। अफगानिस्तान में कट्टरपंथी सुन्नी समूह का शासन होना और उसे चीन एवं पाकिस्तान दोनों से समर्थन मिलना भारत की असुरक्षा बढ़ाने का ही काम करेगा। इस जमावड़े को रोकने के लिए भारत के पास खुले एवं प्रच्छन्न दोनों ही तरीके आजमाने के सिवाय कोई विकल्प नहीं है। हमने नब्बे के दशक में भी तालिबान के उभार के समय ऐसा किया था और इस कवायद को एक बार फिर दोहराया जा सकता है। हालांकि इस बार हालात कहीं ज्यादा चुनौतीपूर्ण हैं।

राष्ट्रीय सहारा

Date:03-08-21

विश्व व्यवस्था को प्रभावित करेंगे

अवधेश कुमार

अमेरिकी विदेश मंत्री एंटोनी ब्लिंकन की भारत यात्रा पर केवल भारत के अंदर ही नहीं बाहर भी कई देशों की गहरी द्रष्टि रही होगी। वे ऐसे समय भारत आए जब अफगानिस्तान को लेकर अनिश्चय का माहौल है, पाकिस्तान चीन के साथ मिलकर वहां महत्वपूर्ण भूमिका निभाने की ओर अग्रसर है, भारत को अफगानिस्तान से बाहर करने या वहां भूमिकाहीन करने की कोशिशें चल रही हैं एवं चीन की भारत विरोधी गतिविधियां जारी हैं। निस्संदेह, कोविड महामारी से निपटने में आपसी सहयोग भी यात्रा का एक महत्वपूर्ण मुद्दा था, पर सामरिक चुनौतियां एजेंडा में सबसे ऊपर रहीं। जो बिडेन प्रशासन भारत को कितना महत्व देता है इसका अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि इस वर्ष ब्लिंकन भारत आने वाले तीसरे अमेरिकी नेता थे। ब्लिंकन के पहले रक्षा मंत्री लॉयड ऑस्टिन तथा जलवायु परिवर्तन मामलों पर अमेरिकी राष्ट्रपति के विशेष दूत जॉन कैरी भारत आ चुके हैं। ब्लिंकन की यात्रा में हिंद-प्रशांत क्षेत्र में शांति और स्थिरता को बढ़ावा देने के अलावा अफगानिस्तान सहित क्षेत्रीय सुरक्षा के मामलों पर अधिक सशक्तता से मिलकर काम करने पर सहमति बनी है। विदेश मंत्री एस जयशंकर के साथ संयुक्त प्रेसवार्ता में ब्लिंकन ने कहा कि भारत और अमेरिका की साझेदारी हिंद-प्रशांत क्षेत्र में स्थिरता और समृद्धि प्रदान करने तथा दुनिया को यह दिखाने के लिए महत्वपूर्ण होगी कि लोकतंत्र अपने लोगों के लिए कैसे काम कर सकता है। उन्होंने भारत के महत्व को रेखांकित करते हुए कहा कि दुनिया में ऐसे बहुत कम रिश्ते हैं जो भारत और अमेरिका के बीच के संबंधों से ज्यादा महत्वपूर्ण हैं। उनके शब्द थे कि भारत और अमेरिका के लोग मानवीय गरिमा और अवसर की समानता, कानून के शासन, धर्म और विश्वास की स्वतंत्रता सहित मौलिक स्वतंत्रता में विश्वास करते हैं। ये बातें महत्वपूर्ण हैं और इनसे भारत अमेरिका संबंधों की ठोस व्यावहारिक और वैचारिक आधार भूमि का आभास होता है।

ब्लिंकन की राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार अजीत डोभाल के साथ भी लंबी मुलाकात हुई। इसमें द्विपक्षीय एवं क्षेत्रीय सामरिक मुद्दे शामिल थे। हालांकि इस संबंध में सार्वजनिक तौर पर बहुत कुछ नहीं कहा गया लेकिन हम मान सकते हैं कि अफगानिस्तान, पाकिस्तान, चीन और हिन्द-प्रशांत क्षेत्र पर बातचीत केंद्रित रही होगी। अफगानिस्तान को लेकर अमेरिका ने भारत को क्या आश्वासन दिया यह भले अस्पष्ट है, लेकिन वह तालिबान के खिलाफ बीच-बीच में हवाई हमले कर रहा है तथा अफगानिस्तान सरकार को भारी आर्थिक एवं सैन्य सहायता देने जा रहा है। इसका अर्थ हुआ कि अमेरिका जमीन से भले वापस चला जाए, अफगानिस्तान सरकार को वह उनके ही हाल पर नहीं छोड़ रहा। भारत-अमेरिका के बीच प्रशांत क्षेत्र से जुड़ा क्वाड भी बहुआयामी सहयोग का मंच है। इस वर्ष के आरंभ में क्वाड का वर्चुअल शिखर सम्मेलन हुआ, जिसमें अमेरिकी राष्ट्रपति के अलावा जापान के प्रधानमंत्री योशिहिदे सुगा, भारत के नरेंद्र मोदी और ऑस्ट्रेलिया के स्कॉट मॉरिसन शामिल हुए थे। उस बैठक में कोविड-19 टीके को लेकर एक कार्य समूह गठित हुआ था तथा यह तय हुआ था कि जापान की आर्थिक व ऑस्ट्रेलिया की लॉजिस्टिक मदद से भारत हिन्द-प्रशांत के देशों के लिए अमेरिकी टीका की एक अरब खुराक बनाएगा। आगे कैसे उस निर्णय को अमल में लाया जाएगा यह ब्लिंकन की यात्रा के दौरान चर्चा का विषय रहा होगा। क्वाड से अमेरिका के हित भी गहरे जुड़े हुए हैं। दो महासागरों वाले हिंद-प्रशांत क्षेत्र अमेरिका के समुद्री हितों की द्रष्टि से काफी महत्वपूर्ण है। संयुक्त राष्ट्र के अनुसार इस वर्ष दुनिया के कुल निर्यात के 42 प्रतिशत और आयात की 38 प्रतिशत सामग्रियां यहां से गुजर सकती है। 2019 का आंकड़ा बताता है कि इन महासागरों से 19 खरब डॉलर मूल्य

की अमेरिकी व्यापार सामग्रियां गई थी। चीन जिस प्रकार अपनी आर्थिक और सैन्य ताकत की बदौलत दुनिया में वर्चस्व कायम करने की ओर अग्रसर है क्वाड उसे रोकने का रणनीतिक मंच बने तभी इसकी उपयोगिता है। ब्लिंकन ने नई दिल्ली में निर्वासित तिब्बती सरकार तथा दलाई लामा के प्रतिनिधियों से सार्वजनिक मुलाकात कर फिर चीन को कुछ साफ संकेत दिया है। भारत यात्रा के दौरान कई अमेरिकी नेता तिब्बतियों से मुलाकात करते रहे हैं पर इस बार यह इस मायने में अलग हो जाता है क्योंकि प्रधानमंत्री मोदी ने पिछले दिनों दलाई लामा को जन्म दिवस पर बधाई देने का संदेश ट्वीट भी कर दिया। किसी भारतीय प्रधानमंत्री द्वारा ऐसा पहली बार किया गया। यह बिल्कुल संभव है कि अमेरिका और भारत के बीच तिब्बत को लेकर कुछ दीर्घकालीन नीतियों पर सहमति बनी हो। यदि भारत अमेरिका, यूरोप तथा एशिया में जापान जैसे देशों के साथ मिलकर सक्रिय होता है तो यह चीन की आक्रामकता का माकूल प्रत्युत्तर होगा। चीन का सामना करने के लिए क्वाड का विस्तार जरूरी है। भारत और अमेरिका साथ मिलकर अगर इसमें यूरोपीय देशों को शामिल करें तो फिर यह ज्यादा सशक्त मंच बन सकता है।

अमेरिका और भारत के बीच रक्षा सहयोग काफी आगे बढ़ चुका है और उस पर ब्लिंकन की यात्रा के दौरान भी बातचीत हुई। सैन्य अभ्यास, प्रशिक्षण, आतंकवाद विरोध, गुप्तचर सूचनाओं के आदान-प्रदान आदि की बात की गई है। आने वाले समय में इस दिशा में और बातचीत होती रहेगी। हथियार बेचने की बात अपनी जगह है लेकिन मोदी सरकार की कोशिश है कि साझेदारी के साथ अमेरिकी कंपनियां यहां रक्षा सामग्रियों का उत्पादन करें। उस दिशा में अमेरिका क्या करता है यह देखना होगा। द्विपक्षीय व्यापार में अमेरिका ने जिस तरह के शुल्क लगाकर अपने देश को रक्षित करने की कोशिश की है उससे भारत का निर्यात प्रभावित हो रहा है। निश्चित रूप से ब्लिंकन से इस पर चर्चा हुई होगी। कुल मिलाकर ब्लिंकन की यात्रा सकारात्मक मानी जाएगी। अफगानिस्तान में अमेरिका सक्रिय रहेगा तथा नहीं चाहेगा कि चीन और पाकिस्तान वहां प्रभावी हों एवं भारत निष्प्रभावी। ज्यादातर मुद्दों पर आपसी सहमति यह बताने के लिए पर्याप्त है कि आने वाले समय में दोनों देशों का सहयोग ज्यादा ठोस और विस्तारित शक्ल में दिखेगा। इस स्तर की भारत अमेरिका सहयोग और साझेदारी अंतरराष्ट्रीय व्यवस्था को प्रभावित करने वाली साबित हो सकती है।

Live हिन्दुस्तान .com

Date:03-08-21

डिजिटल कारोबारी सुविधाओं में भारत के बढ़ते कदम

जयंतीलाल भंडारी, (अर्थशास्त्री)

इन दिनों पूरी दुनिया में एशिया प्रशांत क्षेत्र के लिए संयुक्त राष्ट्र आर्थिक एवं सामाजिक आयोग (यूएनईएससीएपी) द्वारा प्रकाशित डिजिटल एवं टिकाऊ व्यापार सुविधा वैश्विक सर्वेक्षण रिपोर्ट 2021 की खूब चर्चा है। इस सर्वेक्षण में दुनिया की 143 अर्थव्यवस्थाओं के तहत व्यापार की पारदर्शिता, संस्थागत प्रावधान व सहयोग, कागज रहित व्यापार एवं सीमा पार कागज रहित व्यापार जैसी मुख्य कसौटियों पर भारत ने 90.32 फीसदी अंक हासिल किए हैं। दो वर्ष पहले किए गए इसी

सर्वेक्षण में भारत को 78.49 प्रतिशत अंक मिले थे। इस रिपोर्ट में कहा गया है कि डिजिटल एवं टिकाऊ व्यापार सुविधा में कोरोना महामारी की चुनौतियों के बीच भारत ने अपनी स्थिति काफी मजबूत कर ली है।

गौरतलब है, इस सर्वेक्षण में भारत का समग्र स्कोर फ्रांस, ब्रिटेन, कनाडा, नॉर्वे, फिनलैंड आदि कई देशों के मुकाबले अधिक पाया गया है। भारत ने पारदर्शिता सूचकांक के लिए 100 फीसदी और व्यापार में महिलाओं की भागीदारी के मामले में 66 फीसदी अंक हासिल किए हैं। यह महत्वपूर्ण है कि डिजिटल एवं टिकाऊ व्यापार सुविधा पर यूएनईएससीएपी रैंकिंग में सुधार के लिहाज से भारत दक्षिण एवं दक्षिण-पश्चिम एशिया क्षेत्र और एशिया-प्रशांत क्षेत्र की तुलना में सबसे अच्छा प्रदर्शन करने वाला देश है।

कोरोना-काल की देश-दुनिया की कारोबारी गतिविधियां तेजी से ऑनलाइन हुई हैं। वर्क फ्रॉम होम व आउटसोर्सिंग को व्यापक तौर पर बढ़ावा मिलने से भारत में डिजिटल कारोबार की अहमियत काफी बढ़ी है। महामारी के दौरान भारत के आईटी सेक्टर द्वारा समय पर दी गई गुणवत्तापूर्ण सेवाओं से वैश्विक उद्योगों का भारत की आईटी कंपनियों पर भरोसा बढ़ा है। चीन से मोहभंग होने के कारण भी भारत के डिजिटल कारोबार में विदेशी निवेशकों की दिलचस्पी बढ़ी है। अमेरिकी टेक कंपनियों सहित दुनिया की कई कंपनियां भारत में स्वास्थ्य, शिक्षा, कृषि तथा रिटेल सेक्टर में ई-कॉमर्स बाजार की अपार संभावनाओं को अपनी मुट्ठी में करने के लिए निवेश के साथ आगे बढ़ी हैं। अमेरिका, यूरोप और एशियाई देशों की बड़ी कंपनियां नई प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में भारतीय आईटी प्रतिभाओं के जरिये नवाचार को बढ़ावा देने के लिए भारत में अपने ग्लोबल इनहाउस सेंटर (जीआईसी) तेजी से बढ़ा रही हैं। दरअसल, इंटरनेट ऑफ थिंग्स, कृत्रिम बुद्धिमत्ता और डेटा एनालिटिक्स जैसे क्षेत्रों में उत्साहजनक स्टार्टअप माहौल के चलते वैश्विक कंपनियां भारत का रुख कर रही हैं।

भारत में डिजिटल कारोबार सुविधाओं के बढ़ने और कारोबारी सुगमता में बेहतरी का संकेत वर्ल्ड बैंक की 'ईज ऑफ डूइंग बिजनेस 2020' रिपोर्ट से भी मिलता है। इस रिपोर्ट के मुताबिक, भारत 190 देशों की सूची में अब 63वें स्थान पर पहुंच गया है। वर्ष 2019 में इस सूची में यह 77वें स्थान पर था। यानी 14 पायदान का सुधार! विश्व बैंक ने भारत को कारोबार का माहौल सुधारने के मामले में नौवां सर्वश्रेष्ठ देश बताया है। विश्व बैंक के मुताबिक, भारत ने जिन चार क्षेत्रों में बडे सुधार किए हैं, वे हैं- बिजेनस शुरू करना, दिवालियापन के मुद्दे का समाधान करना, सीमा पार व्यापार को बढ़ाना और कंस्ट्रक्शन परमिट में तेजी लाना।

इसमें कोई दो मत नहीं कि डिजिटल व टिकाऊ कारोबार सुविधाओं पर आधारित मजबूत बुनियाद और बडे बाजार की वजह से भारत में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (एफआई) तेजी से बढ़ा है। वित्त मंत्री के मुताबिक, वर्ष 2020 में भारत में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (एफडीआई) प्रवाह 25.4 फीसदी बढ़कर 64 अरब डॉलर तक पहुंच गया है। दुनिया में एफडीआई प्राप्त करने के मामले में भारत वर्ष 2019 में आठवें स्थान पर था, जो 2020 में पांचवें स्थान पर आ गया है।

साफ है, डिजिटल एवं टिकाऊ व्यापार के कारण भारत लाभ की स्थिति में है। पर अभी सीमित संख्या में ही डिजिटल कौशल में दक्ष प्रतिभाएं कारोबार की जरूरतों को पूरा कर पा रही हैं। देश को बड़ी संख्या में युवाओं को नई तकनीकी योग्यताओं के साथ एआई, क्लाउड कंप्यूटिंग, मशीन लर्निंग व अन्य नए डिजिटल कौशल में दक्ष करना होगा। मोबाइल ब्रॉडबैंड स्पीड के मामले में देश को आगे बढ़ाना होगा।